रवीन्द्र नाथ टैगोर की परम्परा का विश्व-साहित्य

डॉ.ज्योति शर्मा

भारतीय संस्कृति की श्लाका पुरुषों में जो नाम आज किंवदंतीबन चुका है - वह रवीन्द्रनाथ टैगोर के रूप में प्रतिष्ठापरक है| एक साहित्यकार, संगीतकार, लेखक, कवि, नाटककार, संस्कृति धर्मी और भारतीय उपमहाद्वीप के साहित्य के एकमात्र नोबेल पुरस्कार विजेता को कौन नहीं जानता ; इन सब के अतिरिक्त जो एक मानवतावादी व प्रयोगधर्मी की छवि ले कर संसार के सामने आये| जिसने साम्प्रदायिकता से हट कर विश्व-साहित्य की दुनिया में एक तुलनायुक्त कदम रखा | ऐसे महापुरुष की वाणी किसी देश या सम्प्रदाय की अधीन नहीं होती बल्कि सम्पूर्ण मानवीयता के उत्कर्ष हेतु स्वयं ज्योति की भांति जल कर अन्य का मार्ग दर्शन करती है | यही कारण है कि ऐसी शख्सियत को शब्दों की सीमा में बांधना क्षितिज की सीमा को मापने के समान होगा |

जैसे की सर्व विदित है कि उन की लेखनी से अछूती कोई भी विधा नहीं रही,लेकिन उन की लेखनी से जुड़े विश्व-साहित्य अर्थात तुलनात्मक साहित्य में टैगोर की एक छवि कुछ इस प्रकार भी रही |विश्व-साहित्य 'वर्ल्ड लिटरेचर' का अनुवाद है,जो जर्मन के कवि गेटे द्वारा १८२७ में प्रयुक्त 'बेल्टलिटरेचर' का अंग्रेजी अनुवाद है | पर टैगोर ने १९०७ में विश्व साहित्य के तीसरे भाग में जो अवधारणा प्रस्तुत की, वह १८२७ में जर्मन कवि व गेटे की २००३ में तुलनात्मक साहित्य के अमरीकी विद्वान डेविड डेमरोश की अवधारणा से बिलकुल भिन्न थी और हम यहाँ टैगोर महारथी की अवधारणा की बात करते हैं |टैगौर अनोखे कवि और बहु-प्रतिभा सम्पन्न सर्जक रहे |उन्होंने विश्वसाहित्य पर सीधे तौर पर बहुत कम लिखा,पर जब भी और जो भी लिखा -उस के पीछे उनका एक लंबा चिन्तन था |न तो वह कोई अर्थ-शास्त्रीयता थी ,न ही कोई राजनीति | वास्तविकता और आश्चर्यजन्य बात तो यह थी कि रवींन्द्र जी ने विश्व-साहित्य और तुलनात्मक साहित्य जैसी दो कोटियों को एक ही भाषण में इकट्ठा कर दिया |इस के इकट्ठा करने के पीछे कोई भ्रान्ति नही थी | बल्कि एक ऐसा जागृतिपूर्ण प्रयास था,जिस में उनकी कवि-प्रतिमा आलोचक-प्रतिमा से ज्यादा प्रभावित मुखरित व सक्रिय जान पड़ी थी | १९०७ में जादवपुर विश्वविद्यालय में राष्ट्रिय शिक्षण समीति की सभा में दिए भाषण में टैगोर जी ने अपनी अवधारणा रूपकों में व्यक्त की | उसे समझने से पहले जानना जरुरी है कि टैगोर राष्ट्रवाद के

2454-342x electronic ISSN

खिलाफ थे | उन्होंने राष्ट्रवाद के कारण हुए युद्धों,युद्ध की विश्व-स्तरीय विभीषिकाओं को मद्दे नजर रख कर राष्ट्रवाद पर दिए भाषण में इनका स्वरुप प्रस्तुत किया | जबकि टैगोर का राष्ट्र का विचार पश्चिमी विचारधारा से प्रेरित था और उसकी तंगदिली व नतीजन आई भयावहता से वह क्षुब्ध रहे | विश्वमानव के रूप में उन्होंने विश्वमानव का आदर्श अपनाया | राष्ट्रवाद के साथ राष्ट्रीय साहित्य भी उन्हें स्वीकार न था क्योंकि दोनों पक्ष ही हिंसा, बर्बरता, अमानवीयता और मूल्यहीनता का जामा पहने हुए थे | वे दोनों पक्ष उनकी उदार भारतीय संस्कृति के मूल्यों से कोसों दूर या विरोधी थे; जिनमें जीव, वनस्पति, जड़ व मनुष्य इत्यादि की,शांति, भाईचारा और लोक-मंगल व सह-अस्तित्व की विचारधारा निहीत है |

इस बात में कोई अतिश्योक्ति न होगी कि टैगोर जी ने अपने ढंग से राष्ट्रवाद तथा उससे अनुस्यूत राष्ट्रिय साहित्य के विरूद्ध विश्व साहित्य को प्रस्तावित किया |उनके विश्व साहित्य के पीछे विश्व मानव की अवधारणा है जो संकीर्णता, आधे-अधूरे राष्ट्र, जाति, , धर्म, समाज की दीवारों से कहीं हट कर थी | यह विश्वमानव की अभिव्यक्ति है और इस अभिव्यक्ति के माध्यम से पठन-पाठन व प्रचलन से विश्वमानव बनने की एक कोशिश को जागृत किया गया है | जबकि डेमरोशके विश्व साहित्य की अवधारणा के पीछे ऐसे उदात्त-चिंतन का निरन्तर अभाव है | उनकी चिंता साहित्य कृतियों के प्रचलन, उनके स्वीकरण, उन में आये बदलावों के अध्ययन तक सीमित हैं| विश्व साहित्य को मनुष्य की आवश्यकता क्यों होती है?इसके पीछे मानव-आस्तित्व, व्यवस्था, अभिव्यक्ति आदि भावनाओं का कोई दूर-दूर तक लेना-देना नहीं है : डोमरोश का विश्वसाहित्य कागजी बलबूतों पर तैयार फूलों का गुलदस्ता हो सकता है, पर वास्तविक फूलों की महक से उतना ही परे है, क्योंकि न तो उसमें बच्चे की तरह बाग़ को संभालने वाला माली है और न हीफूलों की खुशबू| बस है,तो केवल मर्जी,जिद्द और वहम | जबकी टैगोर का विश्व साहित्य उस अद्भुत मंदिर सा है जिसमें ईश्वरीय रूप में मानव-विश्वमानव का रूप स्थापित है और सभी लेखक विद्वतजन अपनी समर्था के अनुसार अपने सृजन शक्ति द्वारा इसके निर्माण में योगदान दे रहे हैं| टैगोर मानव मानवीय योग्यताओं क्षमताओं और ब्रहमांड के सभी तत्वों में गहरा अंतर-सम्बन्ध मान कर चलते हैं| ब्रह्माण्ड में मौजूद तत्व की अंतर-सम्बन्ध के बिना सब कुछ बेकार है और यह अंतर-सम्बन्ध तीन प्रकार से हो सकते हैं - बौद्धिकता,आवश्यकता व आनंद | आनंद जो सौन्दर्य से जुड़ा है | यह सम्बन्ध अहम रहित स्थिति में होता है , जिसमें व्यक्ति बिना किसी शक्ति , सत्ता या हक़ के सम्पूर्ण समपर्ण को तत्पर होता है | इसमें आत्मा या अहम का भाव न होकर इसे अन्य रूप में जानना होता है | ऐसी स्थिति में ही सजगता जन्म लेती है ! या यूँ कहें कि सजग-सम्बन्ध होता है | जैसे-माँ बच्चे का प्रेम , पर प्रेम का कारण परिवर्तित हो जाता है | बच्चा इसलिए प्रिय नहीं कि वह बेटा/बेटी है बल्कि वह उसमें पूर्णता को तलाशती है और अपने को पूर्ण मान कर स्वयं को उस

में देखकर महानता का अनुभव करती है | टैगोर न केवल निरे आलोचक थे बल्कि सृजक चिन्तक भी थे | उन्हें अपनी बात रखने के लिए किसी इन्साक्लोपीड़िया की जरुरत नहीं थी, वह अपनी बात रूपकों के माध्यम से कहते थे | अंतर-संबंधता की स्वीकृति तथा उसके लिए जरुरी समर्पण भाव से उत्पन्न आनंद की अनुभूति के लिए वह कृष्ण तथा गोपियों के रास का रूपक प्रस्तुत करते हैं | उनका मानना था कि मनुष्य अपनी अभिव्यक्ति दो मार्ग से करता है - एक तो अपने कार्य से और दूसरा साहित्य से | ये दोनों पहलु एक दूसरे के पूरक हैं| कोई भी कार्य मनुष्य के लिए अभिव्यक्ति का एक बहाना हो सकता है | अभिव्यक्ति तो एक आतंरिक आनंद है | जैसे कि किसी भी त्यौहार पर-जैसे कि दिवाली पर घर की सफाई कई दिन पहले ही शुरू हो जाती है, सफेदी करवाई जाती है, कोने-कोने से कचरा ढूँढकर बाहर निकाला जाता है, घर में पूजा के लिए नयी मूर्तियाँ, चित्र, फल-फूल, घर की सजावट का सामान, रंगोली बनाना, वन्दनवार बनाना और दीप माला से घर को सुशोभित करना इत्यादि सिर्फ काम पूरा करना ही नहीं है बल्कि खुले दिल से कार्य में अभिव्यक्ति भी शामिल है | टैगोर के अनुसार ये हृदय का धर्म है जो अपनी भावनाओं को बाहरी जगत के साथ मिलाकर हृदय और सत्य में सम्बन्ध स्थापित करता है और इसी के बीच भावनाओं का आदान-प्रदान भी हो जाता है, जो उपहार का रूप ले लेता है |जिसमें हमारी हृदय-लक्ष्मी जितना मिला है उससे कहीं अधिक लौटाने का भाव रखती है | साहित्य उस वस्तु को पकड़ता है जो न तो कभी ख़त्म होती है और मनुष्य के पास जरुरत से ज्यादा, चाहे वो धन हो, चाहे वो रस हो या चाहे वो आनंद हो या फिर मनुष्य में जो कुछ महान हो | साहित्य ऐसा प्रकाश छोड़ता है,जो स्वयं को अभिव्यक्त करता है और जो इस प्रकाश को सहन नहीं कर सकता,वो साहित्य में शामिल हो ही नहीं सकता | ब्रह्माण्ड में सभी तत्वों की अंतर-सम्पन्नता, उसमें मनुष्य की अनोखी स्थिति और साहित्य सृजन के बारे में जब टैगोर जब विश्व साहित्य की बात करते हैं तो वह नटवर कृष्ण के बाद नटराज के रूपक को लाते हैं | जो नृत्य और मृत्यु दोनों की सत्यता तथा समसाम्यकता के देव हैं और नाम से महाकाल हैं,जो एक छननी लेकर बैठे हैं जिसमें से छोटा और घटिया छान कर नीचे गिर जाता है | साहित्य में तलाश के बारे में टैगोर कहते हैं कि विश्वमानव विश्व साहित्य के द्वारा खुद को अभिव्यक्त करता है जहाँ लेखक केवल एक सृजक ही नहीं लेखन का विनाशक भी होता है | जहाँ वह अपनी भावनाओं में अन्य की भावनाओं को मुखरित करता है और जब वह दूसरे के दर्द को अभिव्यक्त करता है, तब कहीं जाकर उसकी रचना को साहित्य में जगह मिलती है | टैगोर एक और रूपक 'मंदिर' का प्रयोग करते हैं और कहते हैं - विश्वमानव एक श्रेष्ठ निर्माता है जो विश्वकर्मा की भांति मंदिर का निर्माण करता है और लेखक वर्ग मजदूरों की भांति शिला लगाते हुए उस निर्माण में अपना योगदान देते हैं और सबसे विचित्र बात यह है कि इस इमारत का कोई नक्शा, कोई आकार, कोई रूप, कोई नहीं जानता | बस इसमें अगर कुछ गलत होता है वो गिरकर, टूटकर, बिखर जाता है | इसमें किसी भी लेखक मजदूर को कोई भौतिक पुरस्कार नहीं मिलता |

मिलती है तो बस-एक उस्ताद की शोहरत | टैगोर के विश्व साहित्य की इस अवधारणा से अन्य बहुत कुछ सीख सकते हैं | ब्रह्मांड के सभी तत्वों की अंतर सम्बंधता तथा अन्य विपरीत पहलुओं के विरोध को समर्पण भाव द्वारा समाप्त कर,जिससे विश्व साहित्य की पहचान राजनीति की लड़ाई से न होकर सामंजस्य का संगम बनाता है | टैगोर ऐसे विश्व साहित्य का साकारात्मक, समावेशी तथा तुलनात्मक प्रतिमान पेश करते हैं | इसमें लेखक के लिए या रचना के लिए स्थान और समय कोई मायने नहीं रखता,केवल शर्त है तो बिना पुरस्कार के मेहनत की स्वीकृति की | सौन्दर्य का आनंद और परपीड़ा की अनुभूति और अभिव्यक्ति इस पीड़ा का मापदंड हैं | इसीलिए टैगोर कहते हैं कि -"जिसे आप अंग्रेजी में तुलनात्मक साहित्य कहते हैं, बांगला में मैं उसे विश्व साहित्य कहना चाहूँगा|" इस बात में कोई अतिश्योक्ति नहीं है कि टैगोर का विश्व-साहित्य सच्चे अर्थ में साहित्य है, क्योंकि यह मानव मूल्यों पर आधारित है तथा विश्वमानव का विधाता भी | एक ऐसा विधाता जो आगामी पीढ़ी के लिए विश्वशांति का न केवल सपना संजोय हुए है बल्कि उसकी नींव बनकर उसके लिए पृष्ठभूमिभी तैयार करता है |

सन्दर्भ :-

1. डे. डेमरोश, 'ह्वाट इज वर्ल्ड लिटरेचर ? प्रिन्सटन यूनिवर्सिटी प्रेस, २००३
2. टैगोर, विश्व साहित्य "वर्ल्ड लिटरेचर" , रवीन्द्रनाथ टैगोर : सिलेक्टेड राइटिंग आन लिटरेचर एंड लैंग्वेज, ऑक्सफ़ोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, पृ. १३८-१५०
3. टैगोर नैशनलिज्म, ऑक्सफ़ोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, १९१७
4. आलोचना त्रैमासिक पत्रिका, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली २०१३
5. रवीन्द्र -कविता-कानन ,सूर्यकांत त्रिपाठी निराला ,लोकभारती प्रकाशन ,इलाहाबाद २०११

---

[i] **असिस्टेंट प्रोफैसर, हिंदी विभाग, लवली प्रोफैशनल यूनिवर्सिटी, जालंधर**

Email: jems.sandy@gmail.com